॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हमारे आज आरम्भ के वेद-मन्त्रों में उस परब्रह्म परमात्मा की याचना की जा रही थी। हे परमात्मन! किसी भी लोक-लोकान्तर का प्राणी हो परन्तु जब उसे अशान्ति प्राप्त होती है तो वह तेरी ही शरण में आ जाते हैं और अपनी मानवता को शांति प्रियता बनाकर के प्रस्थान कर जाते हैं। इसी प्रकार आज हम उस प्रभु की याचना करते हुए अपने जीवन को ऊँचा बनाते चले जाएँ। आज हम प्रभु से याचना कर रहे हैं कि हे प्रभु! तू सँसार के प्राणियों को ऊँचा बना। हे प्रभु! इनके द्वारा ओज और तेज हो, इन्हीं से यह समाज और राष्ट्र ऊँचा बना करता है। जब हम प्रभु की याचना करते हैं तो हमारा हृदय गद्‌गद् होने लगता है। मैं अपने प्रभु से यह कहा करता हूँ कि हे परमात्मन्! तू कितना उज्जवल है, तेरी महानूता कितनी महान् है, तू उस महानूता का दिग्‌दर्शन कराता है जिसे मानव किसी काल में स्वप्नवत् भी दृष्टिपात नहीं कर पाता। आज हम उस मनोहर देव के द्वारा जाना चाहते हैं। प्रायः कोई भी मानव हो परन्तु वह प्रभु के लिए उत्सुक रहता है क्योंकि उसे आनन्द जो प्राप्त होता है, आनन्द के लिये वह अपने जीवन को सदैव प्रगतिशील बनाता रहता है। यह उत्कृट इच्छा जागृत रहती है कि मैं उस आनन्द को प्राप्त करने वाला बनूँ जिस आनन्द में वास्तव में परम अग्रित आनन्द प्राप्त होता चला जाये। हे प्रभु! तू हमें अपनी गोद में धारण कर, अपने आँगन में धारण कर। जिससे हमारा जीवन आपसे सुगठित रहेगा तो भगवन्! हमारे जीवन में अशान्ति न होगी।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(पुष्प न.-12 प्रवचन–दिनांक 2 अगस्त 1968)

अँक : 480 समग्र अँक : 555
वर्ष : 40 समग्र वर्ष : 47

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	वेदज्ञ ज्ञान का चिंतन	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-18
3.	मानव को यज्ञ की प्रेरणा	पूज्यपाद-गुरुदेव	19-26
4.	कर्मों का भोग	पूज्यपाद-गुरुदेव	27-30
5.	शान्ति प्रकरण		31-34
5.	दान, सूचना इत्यादि		35-36

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्मोत्सव

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज, आदि गुरु ब्रह्मा जी के परम प्रिय शिष्य का 70 वाँ जन्मोत्सव दिनाँक 1 अक्टूबर से 3 अक्टूबर, 2012 तक गुरुदेव की कर्मभूमि एवम् निर्माणीत यज्ञीय स्थली लाक्षागृह बरनावा में सामवेद ब्रह्म पारायण महायाग के आयोजन द्वारा प्रतिवर्ष की भाँति बड़े हर्षोल्लास के साथ श्री गाँधी धाम समिति (पँजी) द्वारा मनाया जा रहा है। आप सभी इस यज्ञ में अपने परिवार, सगे-सम्बन्धी एवम् मित्रों सहित सादर आमंत्रित हैं।

–श्री गाँधी धाम समिति (पँजी.)

शृङ्गीऋषि बेवसाईट
www.shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

वेदज्ञ ज्ञान का चिन्तन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस-पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता-परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता-परमात्मा महिमावादी है और जितना भी यह जड़-जगत अथवा चैतन्य-जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह परमपिता-परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। इसलिए उस परमपिता-परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान अनन्तमयी माना गया है। प्रत्येक मानव-परम्परागतों से ही उस परमपिता-परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान में लगा हुआ है परन्तु उसका ज्ञान और विज्ञान इतना अनन्तमयी माना गया है क्या अन्तिम चरण में मानव मौन हो जाता है और सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना-विज्ञानवेत्ता हुए हैं परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ जो उस परमपिता-परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके क्योंकि वह सीमा से रहित है और उसका ज्ञान और विज्ञान सीमा में आने वाला नहीं है इसीलिए हम उस परमपिता-परमात्मा की महिमा और उसका प्रायः अपने में वर्णन करते रहते हैं और गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो करके उस परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान वेद-रूपी प्रकाश के माध्यम से उसको जानने का प्रयास कर रहे हैं।

परमपिता-परमात्मा से समन्वय

तो आज का हमारा वेद-मन्त्र अपने में मानो उद्गीत गा रहा है और उस परमदेव आनन्द की महिमा का सदैव अपने में बखान कर रहा है। वेद-मन्त्र कहता है प्राणम्मे-पाहि, उदानम्मे-पाहि, चक्षुर्मे-पाहि, वर्ण ब्रहवा प्रत्येक मानव अपने में विचारता रहा है कि मैं परमात्मा को चक्षु के द्वारा जानना चाहता हूँ परन्तु देखो उसको पाने की इच्छा कर रहा है, नेत्रों को शान्त कर लेता है चक्षु, अग्नि के रूप में जब दृष्टिपात करता है तो वह स्वतः अग्नि हो जाती है। परन्तु जब वह यह कहता है कि श्रोत्रम्मे-पाहि वह श्रोत्रों के ऊपर चिन्तन करता परमात्मा को पाना चाहता है तो वह भी अन्तरिक्ष और दिशाओं का रूप बन जाता है। परन्तु वह कहता है घ्राणम्मे-पाहि जब वह घ्राण के द्वारा पाना चाहता है तो घ्राण स्वतः अपने में वायु का स्वरूप धारण कर लेता है। तो मेरे प्यारे! वह कहता है **चक्षु अमृतम ब्रह्मारसनं ब्रव्हे अवृतम् देवाः** यह कहता है, कि मैं त्वचा में पाना चाहता हूँ तो बेटा! वह त्वचा अपने में स्पर्श का अवृत रूप धारण कर लेता है और घ्राण पृथ्वी के रूपों में रत्त हो करके अपने में शान्त हो जाता है तो विचार आता रहता है कि **हम परमपिता-परमात्मा को कैसे प्राप्त करें क्योंकि इन्द्रियों के द्वारा तो उसे पाया नहीं जाता।** चक्षु में जाते हैं तो अग्नि बन जाती है और श्रोत्रों में जाते हैं तो वह दिशा बन जाती है और रसना में जाते हैं तो वह रस जल बन जाता है, आपोमयी प्रवेश हो जाता है और यदि उसको त्वचा के द्वारा पाना चाहते हैं तो वायु स्वरूप बन जाता है और घ्राण के द्वारा पाना चाहते हैं तो वह गुरुत्व, पृथ्वीत्व में प्रवेश हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो वेद का मन्त्र कहता है कैसे प्राप्त करे? तो मेरे पुत्रो! देखो मुझे वह काल स्मरण आ रहा है जब मैं

याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज के उस विचार-विनिमय क्षेत्र में विचारकों के द्वारा प्रवेश करते हैं जहाँ वे ब्रह्मचारियों के मध्य में विद्यमान हो करके और ब्रह्मचारी-आचार्य-जन मानो देखो एक पंक्ति में विद्यमान हो करके अपने में विचार-विनिमय करते रहे हैं। तो याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज का वह विद्यालय मुझे स्मरण आ रहा है। जहाँ मुनिवरो! नाना ब्रह्मचारी एक पंक्ति में विद्यमान है। प्रातःकालीन आचार्य नैतिक-शिक्षा में और परमपिता-परमात्मा के पाने के लिए सदैव उनका कुछ न कुछ उपदेश होता रहता। तो मेरे प्यारे! देखो जब वह आचार्य प्रातःकालीन एक समय जब वे बेटा! याग के पश्चात् उन्होंने ब्रह्मचारियों को उद्गीत गाना प्रारम्भ किया और वेदमन्त्रों में आया **सम्भवा प्रवेः व्रातम् तपो वर्णस्सुति देवत्वाम् लोकाः** तो उन्होंने यह उद्गीत गाया कि अमृतम् मानो देखो हम परमपिता-परमात्मा की अमूल्य विद्या को अपने में धारण करना चाहते हैं। तो यज्ञदत-ब्रह्मचारी ने कहा हे प्रभु! वेद में मन्त्र आया है कि हम नेत्रों से पाना चाहते हैं तो कैसे प्राप्त करें? तो याज्ञवल्क्य ने कहा कि नेत्रों से तो विद्या को और देखो अग्नि को जाना जाता है। उन्होंने कहा हे प्रभु! हम श्रोत्रों के द्वारा जानना चाहते हैं। उन्होंने कहा यह जो श्रोत्र है ये दिशा रूप बन जाते हैं, यह दिशाओं का और **अप्रतम् देवत्वाम्** यह जो हमारे यहाँ जो दिशाएं हैं जैसे हमारे यहां देखो पूर्व दिशा है, दक्षिणा है और देखो अमृतम् पश्चम प्राचीदिग है और उदीचिदिग यह हमारे यहाँ देखो ध्रुवा और ऊर्ध्वा में मानो देखो यह दिशा रूप बन जाती है। जब शब्द का उद्बोधन होता है शब्द को वो ग्रहण करता है तो मानो देखो विज्ञानवेत्ता कहते हैं कि जब शब्द उच्चारण किया जाता है तो वह देखो पूर्व से दक्षिण में गमन करता है और गमन करता हुआ मानो देखो वह दिशाओं को भ्रमण करता हुआ मानो श्रोत्रों में प्रवेश करता रहता है। इसी प्रकार वह शब्द रूप देखो दिशाओं के अपने स्वरूप को वह धारण कर लेता है वह स्वतः दिशा बन

जाते हैं वह अपने में मानो देखो उसको हम प्राप्त नहीं कर सकेंगे। तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा **सम्भव बहे घ्राणम्में पाहि।** हे प्रभु! हम घ्राण के द्वारा कैसे जाने? उन्होंने कहा घ्राण तो देखो ये पृथ्वी का गुण है और पृथ्वी से मानो इन घ्राण-इन्द्रियों का समन्वय रहता है इसी की मन्द-सुगन्ध को वह अपने में ग्रहण करता रहता है। इसी प्रकार देखो त्वचा वायु से यह **प्राणम्मे-पाहि रूपो वर्सुतम देवाः** मानो प्राणम्में-पाहि हम प्राण के द्वारा हम वायु को जानना चाहते हैं। वायु प्राण रूप बन गया है, प्राण से अपान बन गया, अपान से व्यान बन गया और व्यान से समान बन करके उदान बन गया। मेरे प्यारे! देखो प्राणों का अप्रतम देखो करोड़ों प्रकार के परमाणु लाकर के यह बाह्य-जगत् से आन्तरिक में प्रवेश कर देता है और आन्तरिक-जगत् से यह बाह्य-जगत् में प्रवेश कर देता है। बाह्य ब्रह्मा देखो आन्तरिक दोनों प्रकार का यह क्रियाकलाप करता है। अपान जितनी भी ऊर्ध्वा गति है फैंकने वाली गति है यह सब अपान के द्वारा उत्पन्न होती रहती है और इसी प्रकार अमृतम देखो व्यान निरक्षणं ब्रव्हा क्रतम वह सर्वत्र निरक्षणवादी है और समान मेरे प्यारे! देखो सब में दृष्टिपात करने वाला समान है और उदान मेरे प्यारे! देखो उदाने अमृतम् चित्रम् बृव्हा क्रतो देवाः। यह चित्त के मण्डल में प्रवेश हो जाते हैं नाना प्रकार का जो हमारा आन्तरिक-जगत् है इसको मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार के रूप में परणित किया जाता है तो इसके द्वारा हम इसको जानने के लिए तत्पर होते हैं।

तप से उपलब्धियाँ

तो आज बेटा! मैं तुम्हें दर्शनों में विशेष चर्चा का विषय नहीं बनाना चाहता हूँ। विचार-विनिमय क्या जब यज्ञदत-ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु! आप कहीं कहते हैं कि इस मानव-वृत्तियों को याग के द्वारा

जानो। आप आज यह उच्चारण करने लगे हैं क्या यह मानो इन्द्रियों के द्वारा भी प्राप्त नहीं कर सकते तो प्रभु! तो यह कैसे? तो ऋषि कहता है एक वेदमन्त्र उच्चारण करता हुआ **तपम् ब्रह्मे तपम् दिव्याम तपो वर्सुत प्रहाः लोकाः** हे ब्रह्मचारियों! मेरा वेद-मन्त्र यह कहता है कि तपो वर्णनम् क्या **मानव को तपना चाहिए** क्योंकि तप के पश्चात् ही मानव को नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की उपलब्धियाँ होती हैं और वह सम हो जाता है और शान्त हो करके अपने अर्न्तहृदय में अपनी आत्मा का दर्शन करता है और आत्मा में मानो चेतना को अपने में भाषता रहता है। मेरे प्यारे! जब उन्होंने यह कहा **अमृतम् तो प्रभु तपम् ब्रव्हे** इसी प्रकार वेद-मन्त्र के नाना उद्गीत गाये और उन्होंने कहा **तपो ब्रह्मणे तपम देवत्वाम् राजनं ब्रव्हे क्रतो देवाः अपानम ब्रह्मे देवत्वाम् तपाः।** मेरे पुत्रो! देखो ऋषि कहता है कि राजा भी जब ही ऊंचा होता है जबकि उसका राष्ट्र, और राष्ट्र में उसका राजा तपा हुआ होता है और राजा का जीवन तपो में क्रियात्मक हो मानो देखो प्रत्येक इन्द्री उसकी ज्ञान में तपी होनी चाहिए। तो इसीलिए वह राजा अपने राष्ट्र को ऊंचा बना सकता है। तपम आचार्य ब्रह्मणो देवा आचार्य का भी जब आचार पवित्र होता है आचार में सतत्व हो जाता है तो मानो वह ब्रह्मचारियों को अपने में मानो आचार-संहिता को प्रदान करता रहता है वह आचार्य कहलाता है। तो मानो देखो इन्द्रियों पर जय करने वाला विजय को प्राप्त होता हुआ मुनिवरो! देखो तप को प्राप्त होता है। मेरे पुत्रो देखो ऋषि ने कहा **अमृतम् तपो ब्रह्मणे तपाः** क्या मेरे विचार में यह आता है ब्रह्मचारियों तुम तपस्वी बन जाओ और तप करो मानो गार्हपथ्य नाम की अग्नि में तपायमान हो जाओ और गार्हपथ्य नाम की अग्नि में जो तपता है वह ब्रह्मचारी मानो देखो ब्रह्म में **ब्रह्मणं ब्रह्मे कुकृताः** मानो देखो ब्रह्म में प्रवेश कर जाता है और वह ब्रह्मचरी में प्रवेश कर जाता है तो इस प्रकार बेटा!

जब उन्होंने ब्रह्मचारी को उपदेश दिया तो वे बोले यज्ञम् ब्रव्हा देवत्वाम् तुम याग के पश्चात् मानो देखो तप में प्रवेश कर जाओ। मेरे प्यारे! देखो जब उन्होंने ऐसा कहा तो वह ब्रह्मचारी तो मौन हो गये परन्तु उन्होंने न्यौदा में से वेदमन्त्रों का और उद्गीत गाया और नैतिकवाद देकर के ब्रह्मचारियों से बोले हे ब्रह्मचारियो! मेरी इच्छा यह है कि मैं तप करने जा रहा हूँ। मेरी तप करने की इच्छा बन गई है। ब्रह्मचारी बोले की प्रभु! जैसे आप की इच्छा हो यदि आपका तप का विचार है तो तप कीजिए।

आचार्य से विद्यालय

उन्होंने कहा तुम्हारा विद्यालय सुरक्षित रहेगा। ब्रह्मचारी बोले हे प्रभु! विद्यालय तो सदैव ही सुरक्षित रहते हैं परन्तु आप तप करने जाओगे तो विद्यालय और भी सुरक्षित हो जायेंगे क्योंकि विद्यालय मानो देखो गृह को विद्यालय नहीं कहते हैं। विद्यालय कहते हैं तपे हुए आचार्यों का जहाँ अनुमोदन होता है, जहाँ उनके विचार, उनकी धाराएं, मानो देखो धारा प्रवाह हमारे अन्तःकरण को स्पर्श करती रहती हैं तो विद्यालय मानो उन्हीं से बनता है। विद्यालय मानो देखो आचार्यो और तपस्वियों से ऊंचा बनता है। मेरे पुत्रो! देखो ऋषि बड़े प्रसन्न हुए। ब्रह्मचारियों के इस प्रकार उच्चारण करने के पश्चात् उन्होंने कहा कि मैं तप करने जा रहा हूं। मेरे पुत्रो! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है कि याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज ने देखो विद्यालय को त्याग दिया और त्यागने के पश्चात् भयंकर वन में पहुंचे।

मन का मन से समन्वय

वन में जाने के पश्चात उन्हें कुछ वेद-मन्त्र न्यौदा में से उच्चारण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ तो उसमें एक वेद-मन्त्र आया **मनावचश्प्रहे मनावात प्रहाः मना देवत्वाम् ब्रह्मा क्रतो देव सुताः** तो वह ऋषि

ने एक वेद-मन्त्र अपने में भयंकर वनों में स्थिर हो करके उच्चारण किया और यह कहा वेद-मन्त्र कहता है कि मन का जिससे समन्वय होता है और मन का मन से समन्वय होता है और यदि हम उसको सन्तुष्ट किये बिना यदि हम गृह को त्याग देते हैं तो उसके मन की जो तरंगें हैं वह चाहे दुखद में हों चाहे वह सुखद में हों, परन्तु वही तरंगे वायु मण्डल में मिश्रित हो करके उस मानव के अन्तःकरण में प्रवेश करेगी और उसका तप मानो खण्डित हो सकता है उसके तप में मानो देखो अन्धकार आ जाएगा। मेरे पुत्रो! देखो ऋषि ने और चिन्तन किया और मनन करने के पश्चात् उन्होंने विचारा मेरी तो दो पत्नियां हैं और मैंने उन्हें सन्तुष्ट नहीं किया है–मैत्रये और देखो याग ब्रहा कात्यायनी, दो मेरी पत्नियां हैं उन्हें मुझे सन्तुष्ट करना है। बेटा! वहां से उन्होंने गमन किया और गमन करने के अप्रहा अपने गृह में उन्होंने प्रवेश किया। जब गृह में पहुंचे तो सबसे प्रथम कात्यायनी के ग्रह में पहुंचे और कात्यायनी ने अपने स्वामी को दृष्टिपात करके वह आश्चर्यजनिक हो अप्रहा अव्रतम देवत्वाम् उन्होंने वेद-मन्त्रों का उद्गित गाया और उद्गीत गा करके देवी ने कहा हे प्रभु! वेद-मन्त्र यह कहता है **आचारम् ब्रह्मा सूचत प्रव्हा वेषाम् भूतम् ब्रह्मे अन्तर्गदाः** मेरे पुत्रो! देखो कात्यायनी ने कहा प्रभु! आप के हृदय में विद्यालय से यह कैसी प्रेरणा जागी है क्या आज मैं गृह में प्रवेश करूँगा क्योंकि यह तो बड़ा हमारा कोई सुशोभनीय विचार नहीं है। आपका इसमें क्या रहस्य है? तो याज्ञवल्क्य-मुनि बोले हे देवी! ऐसा नहीं वेद-मन्त्र यह कहता है **मना वाचम् ब्रहे मना क्रतम् देवाः तपम ब्रह्मे वाचस्सुताः** क्या हे देवी! वेद-मन्त्र यह कहता है क्या जो मन से सम्बन्धी है मानो उसे सन्तुष्ट करना है मैं तप करने जा रहा हूं। तो कात्यायनी बड़ी प्रसन्न हुई और कात्यायनी ने कहा प्रभु आपको धन्य है मानो मेरे विचारों में कुछ और ही कृतिकता आ गई। तो भगवन्! आप धन्य हैं, आप तप करने जाईये।

उन्होंने कहा देवी! मैं तप करने जा रहा हूं तुम सन्तुष्ट हो। उन्होंने कहा प्रभु! यह तो हमारा सौभाग्य है क्योंकि संसार में जिस मानो देवी का पति तपस्वी हो और ब्रह्मज्ञानी हो मानो देखो उसका कोई सौभाग्य है। हे प्रभु! आप तप करने के लिए जाईये क्योंकि इन्द्रियों का तप करना, इन्द्रियों को तपाने का नाम तप है और इन्द्रियां जिसकी संसार से उदासीन हो जाती है। हे प्रभु! यह तो हमारा सौभाग्य है। मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण हे महर्षि-याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्न-चित्त हो करके बोले धन्य है देवी!

मेरे पुत्रो! वहां से उस आसन को त्याग करके वह मैत्रये के समीप पहुंचे और मैत्रये ने भी उसी प्रकार उनको आसन दिया और आसन दे करके कहा कहो भगवन! आप कुशल है। उन्होंने कहा देवी मैं अपने में मंगलमय हूं। उन्होंने कहा तो प्रभु **अमृतम् ब्रह्मे वाचसुताः** आपने कहां को गमन किया अपने विद्यालय से। उन्होंने कहा देवी! मैं आज प्रातःकालीन न्यौदा में वेद-मन्त्रों का अध्ययन कर रहा था और अध्ययन में यह आया कि **तपम् ब्रह्मे मनावाचां तपम् देव प्रवाः इन्द्रो समभ्रहे क्रतो देवसुतम्।** हे देवी देखो वेद-मन्त्र आता है क्या मानव को तप करना चाहिए। तो हे देवी! मैं तप करने जा रहा हूं क्योंकि तपस्वी बनना बहुत अनिवार्य है क्योंकि जब ही यह मानव पवित्र होता है और शरीर सार्थक बनता है उन्होंने कहा तो प्रभु! आप तप करने जा रहे हैं तो देव मेरा क्या बनेगा, मैं आपकी देवत्वा हूं। उन्होंने कहां हे देवी! तुम ये क्या उच्चारण कर रही हो मानो तुम्हें यह प्रतीत है जब मेरा तुम्हारा किसी काल में शास्त्रार्थ हुआ था आत्मा के ऊपर तो तुमने यह संसार को मिथ्या और आवरण कह करके मानो देखो बहुत से ऋषि-मुनियों का आपने देखो वाक से वह सम्भो वाक, से शान्त कर दिये थे। तो देवी! यह अज्ञान तुम्हें कहां से आया? तुम्हें यह प्रतीत है क्या संसार में पति जो होता है वह पत्नी तक सीमित होता है परन्तु जब

वह अपने लिये मानो देखो अपने लिए अपने में स्वतः वह पति बन जाता है तो उसका कल्याण हो जाता है। हे देवी! इसी प्रकार पत्नी जो है वह पति तक सीमीत रहती है परन्तु यदि वह अपने लिए यह विचार ले कि मैं अपने में स्वतः पत्नी हूं, मैं अपनी इन्द्रियों का स्वामी हूं और इन्द्रियों की मानो देखो मुझे अधिपथ्य करना है तो हे देवी! तुम्हारा कल्याण हो जाएगा। जैसे एक मानव मानो देखो वह माता का पुत्र, माता अपने पुत्र तक सीमीत रहती है यदि वह यह विचार ले कि मैं देखो अपने में **पुत्रोहुवा प्रमणं ब्रहे,** मैं परमात्मा का पुत्र हूं और मेरा देव ही वह है तो मानो देखो उसका कल्याण हो जाए। हे देवी! पिता अपनी पुत्री तक सीमीत रहता है यदि वह देखो पुत्री अमृतम देखो पुत्री यह जान ले कि मैं प्रभु कि पुत्री हूं, ले कि मैं प्रभु की पुत्री हूं और मेरा यह संसार एक प्रपंच है तो मानो देखो उसका कल्याण हो जाए। क्या वित्त जो होता है यह आत्मा मानो देखो यह **मनस्तम् ब्रह्मे** यह मन तक सीमीत रहता है। हे देवी! देखो वित्त, वित्त के लिए नहीं होता है यह वित्त मानो देखो तृप्ति के लिए होता है इससे वह संसार के नाना प्रकार के क्रियाकलापों में मानो सदैव तत्पर रहे यह उसी की क्रीड़ा कृति। जैसे एक मानव देखो लोकप्रिय बनना चाहता है तो वह लोकप्रिय अपने में ही लोकप्रिय बनता है और जब वह अपने में लोकप्रिय बन जाता है तो उसका व्यापक जीवन बन जाता है, वह ऊर्ध्वा में गमन करने लगता है।

परन्तु देखो, जैसे एक राजा है वह राजा देखो अपने लिए ही राजा नहीं वह अपनी आत्मा के लिए राजा है, वह अपने मनस्तव के लिए राजा है और यह विचारता रहता है कि राजन्नम्ब्रहमा क्रतो देवाः मानो देखो यह जो राष्ट्र है यह मेरी आत्मा की तृप्ति के लिए है मैं अपने लिए ही तो राजा बना हूं मानो देखो प्रजा के लिए नहीं और जब वह अपने लिए राजा बन जाता है कि मैं प्रभु

का सेवक हूं, प्रभु के राष्ट्र मैं हूं मानो देखो उसका कल्याण हो जाता है। तो हे देवी! यह तुम क्या उच्चारण करने लगी हो क्या मानम् ब्रह्मे तुम आत्मा को जानो और आत्मा तुम्हारे अन्तःकरण मानो तुम्हारे मनस्तव का स्वामीत्व कहलाता है। यह मन मानो देखो यह आत्मा, आत्मा के कारण ही तुम्हारा मन गति करता रहता है, प्राण गतिवान होते रहते हैं और यह **शरीराम् भूतम्** यह आत्मा देखो वेदज्ञ बन करके ब्रह्मत्व को प्राप्त करता रहता है। यह मानो देखो योगेश्वर बन करके यह विष्णुत्व को प्राप्त करने लगता है। तो हे देवी! तुम मानो देखो अपने में तृप्त न हो तुम व्यापक रूपों से तृप्ति को प्राप्त हो जाओ। मेरे प्यारे! देखो महर्षि-याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज के इन शब्दों को पान करने के पश्चात् देवी अपने में शान्त हो गई और मैत्रये ने कहा प्रभु! आपको धन्य है, आपने यह मधु विद्या मुझे प्रदान की है इससे मानो देखो मेरा अन्तःकरण प्रकाश में आ गया है मेरा अन्धकार समाप्त हो गया है। हे देव! आप को धन्य है मानो देखो आप तपम ब्रह्मे आप तपस्या करने जाईये।

मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज ने कहा हे देवी! जो भी मानव कर्म करता है वह अपने लिए ही कर रहा है। मानो कोई पुत्र की तृष्णा में लगा हुआ है कोई पुत्री की तृष्णा में लगा हुआ है नाना कोई वित्त की, देखो वित्त में लगा हुआ है यह चाहता है कि मैं ये वितैष्णा मेरे समीप आ मुझे वित्त की प्राप्ति हो जाए। तो यह क्योंकि वह अपने हृदय को तृप्त करना चाहता है इस संसार में देखो यह ब्रह्मांड की रचना करने वाले जब शरीर की रचना की तो–मानो देखो यह सूक्ष्म रूपों से ब्रह्माण्ड की रचना की है और इसमें जो जो है प्रकति के आवेश इनको भी वह चाहता रहता है उसी में लगा हुआ है तो इससे हे देवी! तुम अपने में ब्रह्मज्ञान का चिन्तन करो ब्रह्मज्ञान में प्रवेश हो जाओ जो यह आत्मा आत्मा तुम्हारे शरीर में विद्यमान एक चेतना है **इस चेतना में चेतना का**

भान करते रहो जिस चेतना में चेतना को अपने में प्रवेश कर जाओगे तुम चैतन्य रूप बन करके मानो देखो ईष्णा समाप्त हो जायेगी। तो मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि अमृतम जब देवी ने यह श्रवण किया तो वह चरणों में वन्दनित हो गई और चरणों की वन्दना करते हुए बोली हे प्रभु! आपको धन्य है, आप प्रकाशक है, आप ज्ञान के मानो देखो कुज्ज कहलाते है, आप ज्ञानम ब्रह्मे आप ज्ञानी हैं प्रभु! आप मुझे क्षमा कीजिए। मेरे प्यारे! देवी ने कहा आप तप करने जाईये भगवन्! तो याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने उपदेश में वह सफलता को प्राप्त हो करके बड़े हर्ष-ध्वनि करने लगे और उन्होंने कहा तो देवी मैं तुम्हारा दोनों का बंटवारा किया देता हूं। मेरे पुत्रो! मैत्रये ने कहा प्रभु! यह बंटवारे की आपको आवश्यकता नहीं है यह हम स्वतः अपना बंटवारा कर सकेंगे। आप तप करने जाईये, तप ही हमारा बंटवारा है। तो मेरे प्यारे! देखो याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्न चित्त हो करके वहां से वह गमन करते हैं और भ्रमण करते हुए मुनिवरो! देखो वह भयंकर वन में पहुंचे।

पवित्र-अन्न

वन में जा करके देखो एकन्त स्थली पर वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाने लगे और वेद-मन्त्रों में उद्गीत गाते देखो वह वेद-मन्त्र आ रहे थे **यम्ब्रह्मा प्रणम्ब्रहे वाचन्नमं ब्रहे क्रतम् देवाः असुतम्ब्रह्मा मनन्व्रती देवत्वाम् तपाः वश्रुतम्-देवो ब्रह्मणा प्रति देवत्वाम् तपोः।** वेद का ऋषि यह विचारने लगा, वेद-मन्त्र यह प्रश्न कर रहा है कि तप किसे कहते हैं? तो वह वेद-मन्त्र उसका उत्तर देता है कि **तपं ब्रह्मे मना अस्वतम** क्या **मन को पवित्र बनाने का नाम तप है।** मन को पवित्र कैसे बनाया जाए। तो बेटा! उसके ऊपर विचार करने लगा ऋषि। ऊपर विचार करते-करते वेद-मन्त्रों में चले गये,

गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो गये। उन्होंने बेटा! देखो अन्न को चुना। उन्होंने कहा कि अन्न से मन का निर्माण होता है। तो उन्होंने मुनिवरो! देखो उस अन्न को एकत्रित करना प्रारम्भ किया जिस अन्न पर किसी का अधिकार नहीं था। उसे **शिलस्थ अन्न** कहा जाता है। उस अन्न को एकत्रित किया और उसको वह मानो देखो जल में तपा अग्नि में जल के द्वारा तपायमान करके उसको खरल बना करके उसको पान करते थे। मेरे प्यारे! देखो उन्होंने छः माह तक जब पान किया तो मन पवित्र बन गया। मन में पवित्रता आ गई।

शतपथ-ब्राह्मण की रचना

उन्होंने बेटा! एक लेखनिया बद्ध करने लगे, एक पोथी का निर्माण करने लगे जिस पोथी का नाम **शतपथ-ब्राह्मण** कहा जाता है। तो शतपथ-ब्राह्मण नाम की पोथी का उन्होंने निर्माण किया और उस पोथी में प्रवेश हो गये। **ब्रह्मणा व्रतम** मेरे प्यारे! देखो तप करते हुए इसी प्रकार बारह वर्ष के तप करने के पश्चात मुनिवरो! उन्होंने एक पोथी का निर्माण किया जिस पोथी का नाम शतपथ-ब्राह्मण कहा जाता है। जब शतपथ-ब्राह्मण नाम की पोथी का उन्होंने निर्माण किया तो उन्होंने तीन शब्दों को ले करके पोथी का प्रारम्भ करते है। वह कहते हैं कि वेद-मन्त्रों में देखो एक-आख्यायिका ले करके उन्होंने कहा **ब्रह्मणं व्रहे चरिष्यामि गन्धनम् देवा असुतम तपो व्राणस्सुति देवन्तमाः।** तो बेटा! उन्होंने तीन शब्दों को लेकर के वेद के, देखो प्रारम्भ करते हैं और वह कहते हैं याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज ने पोथी का निर्माण किया। उन्होंने प्रश्न किया कि ब्राह्मण कौन है? तो मानो एक प्रश्न ये दूसरा ये क्या ब्रह्मचारी कौन है? तीसरा प्रश्न किया कि ब्रह्म की चरी को कौन चरता है? तो बेटा! यह तीन प्रश्नों को ले करके ऋषि ने पोथी का प्रारम्भ किया और वह पोथी को प्रारम्भ करने के पश्चात् उन्होंने देखो उसकी व्याख्या की है और

व्याख्याकार कहता है कि ब्रह्म देखो **ब्राह्मण कौन है?** सबसे प्रथम यह प्रश्न आया तो वह कहता है कि ब्रह्मणा ब्रह्मणा देवत्वाम ब्रह्मे मानो देखो ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म को जानता है, ब्रह्म को अपने में और अपने में ब्रह्म को जो स्वीकार करता है उसका नाम ब्राह्मण है। पुनः प्रश्न करता है कि ब्राह्मण कौन है? वह देखो पुनः उत्तर देता है कि ब्राह्मण वह है जो प्रत्येक प्राणी-मात्र में मानो देखो ब्रह्म का दर्शन करता है। मेरे प्यारे! अपना और अपने देव को जो दृष्टिपात करने वाला है वह ब्राह्मण है। मुनिवरो! देखो जब पुनः यह तृतीय प्रश्न किया कि ब्राह्मण कौन है? वह कहता है कि ब्रह्मज्ञान वेद में प्राप्त होता है और वेद के जो मर्म को जानता है वेद-रूपी प्रकाश को जो अन्तःकरण का प्रकाश बनाता है उसका नाम ब्राह्मण कहा जाता है। तो बेटा! यह तीन प्रकार के वाक उन्होंने उच्चारण करने के पश्चात पोथी का निर्माण प्रारम्भ करने लगे, जब लेखनिया बद्ध करने लगे। जब दूसरा प्रसंग आया क्या **ब्रह्मचारी कौन है?** वेद का मन्त्र कहता है ब्रह्मचारी अमृतम् कौन सुताम् ब्रह्मे वेद का शब्द कहता है कि **ब्रह्मचारी कौन है?** तो वह कहता है कि जो ब्रह्म को जानने वाला है। मेरे प्यारे! देखो वह सूतो ब्रह्मणा सूत्र को ब्रह्म कहते हैं। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी वह है जो ब्रह्म और चरी को जानने वाला है। ब्रह्म कहते हैं परमात्मा को, चरी कहते हैं प्रकृति को। जब दोनों को जानने वाला ही तो ब्रह्मचारी है। मेरे प्यारे! देखो ब्रह्म और चरी को जानना वह परमपिता-परमात्मा, चरी नाम प्रकृति का है जो मेरे प्यारे! ब्रह्म-सूत्र में पिरोये होने से देखो सृष्टि की रचना बाह्य दृष्टिपात आती है। वह दोनों चरी बन करके ही ब्रह्म और चरी बन करके ही यह संसार दृष्टिपात आता है। मेरे पुत्रो! पुनः कहता है कि ब्रह्मचारी कौन है? जब द्वितीय प्रश्न करता है कि ब्रह्मचारी कौन है? वह कहता है जो **वेदां भूतम् ब्रहेः वर्णस्सुते देवाः।** जो ब्रह्म देखो वेद को जानने वाला है और वेदज्ञ बन जाता

है वह ब्रह्मचारी है। मानो देखो **ब्रह्मणम्भहे देवाः** वह देखो भ्रम जिसका विनाश को प्राप्त हो गया है जिसको किसी प्रकार का परमात्मा के राष्ट्र में भ्रम नहीं रहा है प्रत्येक इन्द्री के स्वरूप को जो जान गया है उसका नाम ब्रह्मचारी है। जब तृतीय प्रश्न करता है कि ब्रह्मचारी कौन है? मेरे प्यारे! देखो उसका उत्तर देता हुआ लेखनीबद्ध करता हुआ ऋषि कहता है क्या जो प्रत्येक श्वास के साथ में मानो प्रत्येक श्वास का मनका बना करके और देखो ब्रह्म में ब्रह्म को सूत्र बना करके मानो देखो उसमें प्रत्येक श्वास को मनका बना करके ब्रह्मसूत्र में पिरो देता है बेटा! वह ब्रह्मचारी कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो उन्होंने तीन उत्तर एक ब्रह्मचारी के सम्बन्ध में मानो उन्होंने विवेचना की और यह कहा कि प्रत्येक श्वास जब आता है उसको ब्रह्म में सूत्रित कर दो। मानो उसको सूत्र बना करके देखो जैसे माला है और माला में धागा है और धागा और माला देखो मनको का दोनों का समन्वय हो करके माला कहलाती है। जैसे यह सृष्टि है मानो देखो ब्रह्म और प्रकृति का दोनों का सम्मिलन हो करके संसार की रचना हो जाती है। यह परमाणु अपने-अपने स्वरूप में मानो गतिवान हो जाते हैं **चरैवेति ब्रह्मणा चरा सुताः** मानो प्रत्येक परमाणु अपने में चरने लगते हैं तो उसे चैरेवेति कहा जाता है। तो विचार आता रहता है मेरे पुत्रो! वेद का ऋषि कहता है क्या वह ब्रह्मणम्ब्रहे इसी प्रकार सूत्रों और देखो सूत्रो, मनको को, दोनों को अपने में एक ही एकता में दृष्टिपात करेंगे तो हमारा जीवन व्यापिकवाद में परणित हो जायेगा। मेरे प्यारे! देखो उन्होंने कहा कि **ब्रह्म की चरी को कौन चरता है?** वह कहता है ब्रह्म की चरी को जो ब्राह्मण है और ब्रह्मचारी है मानो वही ब्रह्म की चरी को चरने वाला है। ब्रह्म की चरी क्या है? मेरे प्यारे! देखो ब्रह्म और ब्रह्म में जो पिरोई हुई जो चरी है, प्रकृति है उसको मानो उसके ज्ञान और विज्ञान में जो रत्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो एक-एक

परमाणु को जानने वाला और परमाणु से कैसे मिलान होता है उन परमाणुओं का किससे मिलान हो करके क्या बनता है। तो बेटा! देखो इस प्रकार के विज्ञान में जब वह रत्त हो जाता है तो ब्रह्म की चरी को चरने लगता है और चर करके ही मुनिवरो! देखो मन और प्राण को दोनों की एकाग्र करता हुआ मुनिवरो! देखो वह अपने मोक्ष के मार्ग को प्राप्त करने लगता है।

तो आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट नहीं करूंगा। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूं। केवल तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूं और परिचय यह है कि उन्होंने बेटा! देखो इस प्रकार देखो अपने में विचार-विनिमय करके एक पोथी का निर्माण किया। उस पोथी का नाम शतपथ-ब्राह्मण कहा जाता है। जो शत का पथिक है वही ब्राह्मण है मानो देखो उसी के ऊपर उन्होंने अपनी लेखनिया बद्ध की और तीन शब्दों को ले करके उन्होंने बेटा! देखो उसकी विवेचना की है वेद-मन्त्र को ले करके, एक-एक वेद-मन्त्र में सर्वत्र ब्राह्मण्ड का ज्ञान और विज्ञान मानो देखो विद्यमान रहता है। उसको जानने वाला इस संसार-सागर से पार हो जाता है और वह अपने को मानो ब्रह्मवेत्ता बना करके आत्मवेत्ता बन करके बेटा! देखो ब्रह्म को प्राप्त होता हुआ मेरे प्यारे! देखो उसमें वो समाहित हो जाता है।

आत्मा-परमात्मा

आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूं। आज मैं केवल तुम्हें एक ऋषि की वार्ता और उनका जो विचार है, वह कितना महान है वह कहते हैं कि देखो प्राणम्मे-पाहि, श्रोत्रम्में-पाहि मानो देखो इनके द्वारा वह पाना चाहते हैं ब्रह्म को। मेरे प्यारे! देखो **नेत्रों से या इन्द्रियों से इस प्रभु को नहीं जाना जाता। उस प्रभु को जब जाना जाता है जब इन्द्रियों के ज्ञान-विज्ञान**

से ऊर्ध्वा में गमन करोगे तो मानो देखो ब्रह्म में ब्रह्म का समन्वय हो जाएगा। इस आत्मा को ब्रह्म कहते हैं। **परमात्मा का नाम परब्रह्म है** और परब्रह्म और आत्मा का जब, दोनों का समन्वय होता है तो बेटा! एकोकी गति हो जाती है, एकोकी चरण बन जाता है, एकोकी में रमण करता हुआ मुनिवरो! देखो प्रकाश ही प्रकाश दृष्टिपात होता है। मेरे प्यारे! वेद का ऋषि कहता है कि परमात्मा के राष्ट्र में मुनिवरो! देखो परमात्मा का राष्ट्र बड़ा विचित्र है। परमात्मा के राष्ट्र में रात्रि नहीं होती। जब रात्रि नहीं होती तो अलस्य प्रमाद भी नहीं होता और जब आलस्य और प्रमाद नहीं होता तो मेरे प्यारे! देखो वहां अज्ञान नहीं रहता। जहां अज्ञान नहीं होता वहां मृत्यु भी नहीं हुआ करती। वह मृत्युञ्जय बन जाता है तो मृत्युञ्जय बनना है। हमें वेद का वाक कहता है बेटा! परमात्मा के राष्ट्र में सदैव प्रकाश ही प्रकाश रहता है वहां अंधकार नहीं रहता, आलस्य-प्रमाद नहीं होता और जहां आलस्य-प्रमाद नहीं होता बेटा! वहां अंधकार नहीं होता। अंधकार से उपराम होने के लिए प्रत्येक मानव परम्परागतों से अन्वेषण करता रहा है चिन्तन में अपने को लाता रहा है।

यह है बेटा! आज का वाक! आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि परमपिता-परमात्मा का यह ब्रह्माण्ड अनन्तमयी माना गया है इसके ऊपर प्रत्येक मानव को अपने में चिन्तनीय बनना चाहिए

॥ ओ३म् ॥

मानव को यज्ञ की प्रेरणा

एक समय भगवान् राम ने महर्षि वशिष्ठ से कहा, ''महाराज! सँसार में वास्तविक यज्ञ वेदी क्या है?'' उन्होंने कहा कि सँसार में वास्तविक यज्ञ वेदी तो यज्ञ करना है। भौतिक यज्ञ करना है उसके पश्चात् आत्मिक यज्ञ करना है। यज्ञ वेदी को अपनाना हमारा कर्तव्य है। हे राम! आज तुम्हें यज्ञ वेदी को अपनाकर चलना है। तुम्हें अपने सदाचार को अपनाना है और सँसार को सदाचारी बना देना है। 'अहिंसा परमोधर्मः' की वेदी पर आ जाना है जहाँ हिंसक व्यक्ति कोई न हो। इससे तुम्हारे राष्ट्र का कल्याण होगा। तुम्हारी यज्ञ वेदी की रक्षा होगी, तुम्हारी माता की रक्षा होगी, तुम्हारी सँस्कृति की रक्षा होगी।

आज मुझे जब यह वाक्य कँठ आते हैं तो हृदय गद्-गद् हो जाता है। हृदय कुछ का कुछ पुकारने लगता है। आज मुझे वेद का एक-एक अक्षर पुकार रहा है कि हे मानव! तू यज्ञ को अपना। सदाचारी बनकर के यज्ञ पर आ। मेरी प्यारी माता! तू भी सदाचारी बनकर के यज्ञ में आ। तू सँसार को ऊँचा बनाने वाली है। जब तेरा सदाचार ऊँचा होगा तो तेरे गर्भ से वह बालक उत्पन्न हो सकते हैं जो वर्ण व्यवस्था को ऊँचा बना सकते हैं। हे माता! यदि तेरी यज्ञ वेदी शाँन्त हो गयी तो तू उस प्यारे पुत्र को कदापि न उत्पन्न कर सकेगी जो आज सँसार का कल्याण कर दे। दूसरों की रक्षा करने वाला बालक तेरे गर्भ से उस काल

में उत्पन्न होगा जब तू सात्विकता को धारण करेगी। हे माता! आज तू गँगोत्री बन जो भीष्म पितामह जैसे गर्भ से उत्पन्न हो। आज तू वास्तविक बन। जैमिनी जैसे को उत्पन्न कर। आज तू इस यज्ञ वेदी पर आ। यहाँ तेरे गर्भ से नाना भगवान् कृष्ण जैसे पैदा हों। माता! तू क्यों नहीं आती है? हे माता! तू उस वेदी पर आ और भगवान् से प्रार्थना कर। तू उस प्रभु की गोद में चल जिसमें जाने से तेरा गर्भ सँसार में ऊँचा बनेगा। तू सँसार की माता कहलायेगी।

आज तू वह माता क्यों नहीं बन रही है? आज तू अरुणी बन, माता अहिल्या बन जो सँसार का कल्याण करने वाली माता थी। आज तू माता पार्वती बन जो गणेश जैसे पुत्र को उत्पन्न करने वाली हो, स्वामी कार्तिक को उत्पन्न करने वाली हो। माता! तू कहाँ है? कौन से स्थल में जा पहुँची है? कौन से अँधकार रूपी गुफा में जा पहुँची है जहाँ तू अपनी ज्ञानरूपी अग्नि को शान्त कर बैठी है।

मुनिवरो! आज प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या को उस यज्ञ वेदी पर आ जाना है जिस पर आ जाने से मानव-कल्याण होता है। यज्ञ वेदी से वर्ण व्यवस्था बनती है। ब्रह्मा जानता है कि यह शूद्र है यह हमारी रक्षा नहीं कर सकता है, सेवा कराओ। क्षत्रिय से कहो कि तू यज्ञ की रक्षा कर यह तेरा कर्तव्य है। वैश्य से कहो कि तू द्रव्य दे जिस द्रव्य से यह राष्ट्र, यह लोक और परलोक तेरा ऊँचा बने। मानव! आज तू यज्ञ में अवश्य कुछ न कुछ दे। आज तू वह पदार्थ दे, वह हवि दे जिसको पान करके देवता कल्याण के लिए तुझे प्रेरणा दे। 'अहिंसा परमोधर्म' वाली वेदी पर तुझे प्रेरित करें।

आज यदि तू हिंसक बन गया तो हे मानव! तेरा मानव जीवन व्यर्थ हो गया। तू कुछ न रहा। एक पशु के तुल्य बन गया। तू मार्ग में विचरने वाला एक सिँह बन गया है। हे मानव! आज तुझे ऊँचा व्यक्ति बनना है कि सिँह तक तेरे चरणों में ओत-प्रोत हो जाएँ।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जिस समय कजली वन में वेद पाठ किया करते थे तो मैं देखा करता था कि उस समय नाना सिँह आ करके उस वेदवाणी को पान किया करते थे। उस समय वृक्षों पर पक्षी भी शान्त हो जाते थे उस मेरे गुरुदेव की वाणी को पान करने के लिए। हिंसकों की आत्मा भी उस वाणी को पान करके पुकारता था कि हे प्राणी तू हिंसक न बन। तू हिंसक बनेगा तो तेरा कल्याण न होगा। तू अहिंसा सदाचार और चरित्र को अपनाकर यज्ञ वेदी पर आयेगा तो तेरा वास्तव में कल्याण होगा। तू अपने राष्ट्र को भी ऊँचा बना सकेगा। अपने ध र्म की भी रक्षा कर सकेगा। आज तू पुनः से यज्ञवेदी पर आ।

हे मानव! आज तुझे अपनी मानवता की रक्षा करने के लिए, अपना पुनः कल्याण करने के लिए आज तुझे उस आँगन में आ जाना है जहाँ आकर ऋषि मुनि अपने कल्याण के लिए प्रभु से याचना किया करते हैं। तू उस वेदी पर आ, प्रभु के आँगन में आ और नम्रता से चल। प्रभु के आंगन में जाने के लिए, ज्ञानी बनने के लिए, याचक बनने के लिए, यज्ञशाला में जाने के लिए तू आज नेत्रों से देख कि यह क्या है। यह वह भूमि है जहाँ हमारे बड़े-बड़े महर्षियों ने, याज्ञवल्क्य ने और देवताओं ने यज्ञ किया। माता गार्गी जैसी यहाँ यज्ञ वेदी की रक्षा करने वाली तथा परम्परा को ऊँचा बनाने वाली माता कहलाती है। क्योंकि

उन्होंने अपने धर्म की प्रतिज्ञाओं को धारण किया। जो सँकल्पवादी होता है वह सँसार में ऊँचा होता है। आज हमें सँकल्पवादी बनना है।

मेरे प्यारे महानन्द जी जब कुछ वाक्य उच्चारण करते हैं तो इनका वाक्य बहुत ऊँचा होता है। आज मुझे इनके वाक्यों का समर्थन नहीं करना है। मुझे तो आज केवल यह उच्चारण करना है कि आज हमें यज्ञ की रक्षा करनी है। आज शान्त अग्नि को प्रज्वलित करना है और ईधन देकर अग्नि की ज्योति को ऊँचा बनाना है जिस ज्योति से हम लोक-लोकान्तरों तक रमण करने वाले बन जाते हैं। आज मुनिवरो! हमें उस यज्ञ वेदी पर पहुँचना है जिस वेदी पर जाकर मानव का वास्तविक कल्याण हो जाता है और मानव अनुभव करता है कि तू वास्तविक वेदी पर आ पहुँचा है।

हे मेरे प्यारे मानव! हे मेरे प्यारे ऋषि मँडल! आओ, हम प्रभु का गुण-गान गायें। प्रभु ने हमारे जीवन को बनाया है। आज हम प्रभु का गुण-गान गाते चले जाएँ। हे मेरे प्यारे मानव! अपनी मूर्खताओं पर विचार करते चले जाओ। पश्चाताप करते चले जाओ। आज परमात्मा ने तुम्हारे कल्याण के लिए नाना सामग्रियाँ दी हैं। परन्तु तब भी पापाचार में लगे जा रहे हो। आज आओ और अपने कर्तव्यों पर पश्चाताप करें। मानव तू यज्ञ वेदी पर आ करके अपने उन तुच्छ कर्मों पर पश्चाताप कर और उस प्रभु के आंगन के लिए तू प्रेरित हो और उस प्रभु से प्रार्थना कर। जब तू उसके योग्य बन जाएगा तो प्रभु तुझे स्वयँ अपनी गोद में धारण करेंगे। ये तुझे ऐसा निर्मल और पवित्र बना देंगे कि तू इस आवागमन से दूर हो जाएगा। तुझे दुख सागर में नहीं डूबना पड़ेगा।

इस समुद्र सागर से पार हो जाओगे।

हे मानव! तू महान बन। जब निर्मल और स्वच्छ बन जाएगा तो तेरे द्वारा जो नाना प्रकार के अवगुण हैं वह ज्ञानरूपी अग्नि में भस्म हो जाएँगे और उसके पश्चात उस महान स्थान को चला जाएगा जिस स्थान में जाने से तेरा कल्याण होगा।

हे प्रभु! तू कल्याण करने वाला है। आज तू हमें क्यों प्रेरित नहीं कर रहा है। हम भी तो तेरी सृष्टि में आए हैं। यह सँसार भी तो आपका बनाया हुआ है। भगवन्। आपने इन दुराचार और इन पाप कर्मों को क्यों रचाया? आज प्रभु! इनको न रचाते तो हम सँसार में पापी न बनते। प्रभु आज हम पापी हैं। हमें अपने कँठ से लगा। आज हमें प्रेरणा देकर इन पाप भावनाओं को समाप्त करा। प्रभु! हम ज्ञान अग्नि में इन्हें भस्म करना चाहते हैं। विधाता! हम तेरी शरण के लिए महत्ता चाहते हैं। प्रभु! तेरी सहायता चाहते हैं। हमें वह सहायता दे जिससे हम ब्रह्मा के समीप जाएँ, हम यज्ञाशाला में जाएँ, अग्नि प्रज्वलित करें और देवताओं को हवि दें। देवता उसे पाकर प्रेरणा देंगे जिन प्रेरणाओं को पाकर प्रभु! हम तेरी गोद में जाएँगे। हे कल्याणकारी प्रभु! तू कहाँ है? आज हमारे कल्याण के लिए योजना बना। हम तेरी सँसार रूपी यज्ञ वेदी पर आए हैं। हमें प्रेरणा दे। हमें महान् बना। हम वास्तविक ब्रह्मा बनें, योगी बनें। आज विधाता हम अपना ही कल्याण नहीं चाहते हम सँसार का कल्याण चाहते हैं।

आज यह वेद हमें क्या पुकार रहा है? वेद कहता चला जा रहा है हे मानव! तू मानव बन। दूसरों का भक्षण न कर। अहिंसावादी बन।

हिंसक बनेगा तो तेरा अनिष्ट हो जाएगा। आज यदि तू अहिंसावादी बनकर सदाचार को अपनाएगा तो सूर्य जैसा तेरा प्रकाश होगा। सँसार में जो भी त्यागी तपस्वी रहा है परमात्मा की आज्ञाओं का पालन करता है वह सँसार में ऊँचा कहलाया है।

आज प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को ऊँचा बनना है। ऊँचा बनने के लिए वेद रूपी प्रकाश को अपनाना है। यज्ञ वेदी पर जा करके कल्याण करना है। आज का हमारा आदेश यज्ञ के लिए प्रेरित कर रहा था। आज मानव को सदाचारी बनने के लिए कह रहा था। प्रभु के द्वारा जाने के लिए प्रेरित कर रहा था।

मुनिवरो! आज मानव को ऊँचा बनने का सबसे अच्छा साधन क्या है?

सबसे अच्छा साधन है, यज्ञ। सबसे ऊँचा साधन है ब्रह्माओं के द्वारा जाना। ऋषि-मुनियों के द्वारा जाकर अपने नाना कष्टों का निवारण करो। अपने आत्म-कल्याण के लिए उनसे कहो कि हमें आत्मा का आदेश दें।

आज तू वास्तव में आत्मा का आदेश चाहता है तो तू रसना के उस आनन्द को त्याग जिसका आदि और अन्त नहीं। आज तुझे रसना के वास्तविक आनन्द को लाना है। जिस रसना पर 'ओ३म्' का आनन्द आ गया तो मानो! वाणी पवित्र बन गई। यह वाणी आत्मा के द्वारा जाएगी तो तेरा अन्तः करण पवित्र बन जाएगा। आज तू इस रसना के आनन्द में दूसरे जीवों को भक्षण कर रहा है। इस वाणी के द्वारा 'ओ३म्' में क्यों नहीं विचरता। आज तू इस वाणी में 'ओ३म्' को बसा

ले। जब 'ओ३म' तेरी वाणी में स्थान कर जाएगा तो तेरी वाणी व अन्तःकरण पवित्र हो जाएगा। मल विक्षेप आवरण शान्त हो जायेंगे। तेरी आत्मा की पुकार तेरे द्वारा आ करके परमात्मा से मिलान करा देगी।

यह है मुनिवरो! आज का हमारा आदेश! आज का हमारा आदेश कह रहा था कि हे मानव! तू यज्ञ कर और उस यज्ञ को कर जिस यज्ञ से तेरा कल्याण हो। जिससे तू वर्ण-व्यवस्था को धारण कर सकता हो। तुझे वर्ण व्यवस्था को धारण करना है। जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार होता है वह राष्ट्र ऊँचा होता है। वह राष्ट्र महान् कहलाता है।

मुनिवरो देखो! मुझे आज से बहुत पूर्व काल में देवराज इन्द्र के राष्ट्र में भ्रमण करने का अवसर मिला जिसको त्रिपुरी कहते हैं। उनके राष्ट्र में कोई व्यक्ति ऐसा न था जो वेदों का ज्ञाता न हो, जो यज्ञ करने वाला न हो, जो सदाचारी न हो, जो ब्रह्मचारी न हो। कोई ऐसी माता न थी जिसके द्वारा ओज और तेज न हो। कोई ऐसा माता-पिता न था जो वेद के अनुकूल पुत्र न उत्पन्न करता हो और वेद और आज्ञा में न चलता हो। जिस राजा के राष्ट्र में यह सब कुछ विधान होते हैं उस राजा को मुनिवरो! इन्द्र कहते हैं। वह इन्द्रपुरी का स्वामी कहलाता है। वह देवता होते हैं।

हे मानव! आज तुम्हें ऊँचा बनना है और अपने राजा को इन्द्र चुनना है। वह इन्द्र राजा जो देवताओं की रक्षा कर सके। आज मानव को मानव बनना है और इन्द्र के राष्ट्र में जाना है।

यह है मुनिवरो! आज का आदेश। अब बेटा! कल समय मिलेगा

तो कल और सुन्दर आदेश होगा।

पूज्य महानन्द जी– ''धन्य हो प्रभु आज का आदेश तो बड़ा विचित्र था परन्तु कुछ सूक्ष्म हुआ।''

(हास्य के साथ) यह तो बेटा! तुम नित्य प्रति कहा करते हो, यह तो तुम्हारा बहुत पूर्व से अभ्यास है।

तो मुनिवरो! हमारा अब यह आदेश समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिला तो कल हम कुछ योग प्रणाली का निर्णय देंगे जो कुछ आदि ऋषियों से पाई है। अनुभव तो नहीं कहना चाहिए। कल यज्ञ के ऊपर भी कुछ प्रकाश देंगे। आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय था कि आज हमें यज्ञ द्वारा वर्ण व्यवस्था को कैसे बनाना है। देवता कैसे बनाना है। परमात्मा के समीप कैसे जाना है। कई विषय थे। अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है, कल समय मिलेगा तो कल और विचित्र आदेश होगा। अब हमारा कुछ वेदों का पाठ होगा।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(पुष्प न-7 प्रवचन–8 नवम्बर 1963)

॥ ओ३म् ॥

कर्मों का भोग

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमें विचार-विनिमय करने का सौभाग्य मिला कि मानव के जीवन का विकास कैसे बनता है। यह सूक्ष्म सी मैंने चर्चायें प्रकट की हैं कि मानव इस मनीराम के कारण से बाहरी जगत में आता है। यही इसको लाने वाला है और यही बाहरी जगह से आन्तरिक जगत में ले जाता है। इसीलिए इसको जानना सदैव मानव का कर्तव्य है। इसी को कर्त्तव्यवाद में ले जा करके इसी से मानव को परमानन्द और परम शान्ति प्राप्त होती है। जब ज्ञान होता है और प्रयत्न भी शुद्ध और पवित्र होता है तो उस समय मानव को वास्तविक शान्ति प्राप्त होती है मानो, ज्ञान का ही वस्त्र होता है, ज्ञान का ही भूषण होता है, ज्ञान का ही उसका मार्ग होता है और ज्ञान का ही उनका सर्वस्व शरीर होता है तो उस समय वह मानव परम शान्ति को प्राप्त हो जाता है। यदि मानव ज्ञान के क्षेत्र में नहीं जाना चाहता, विचार-विनिमय करने का सौभाग्य मानव को प्राप्त नहीं होता तो मानव यह न विचारे कि जो मैं कर्म करता हूँ वह मुझे नहीं भोगना होगा। क्योंकि **मानव जो भी शुभ-अशुभ कर्म करेगा, दोनों को भोगना उसके लिए अनिवार्य है।** इसीलिए तुम विचार-विनियम करो, अपने मानव शरीर को जानने का प्रयास करो कि यह हमारा मानव शरीर है क्या? इसमें वास्तविकता है क्या? यह कैसे परमाणुओं से सुगठित होने वाला शरीर, कितना सुन्दर लेपन है, कितने सुन्दर चक्षु हैं, प्रत्येक इन्द्रिय प्रभु ने कितने ज्ञान और विज्ञान से रची हैं परन्तु इन्हें बाह्य और आन्तरिक, दोनों रूप से जानना मानव का कर्तव्यवाद कहलाता है। आज मानव को यह विचार-विनियम करना चाहिए कि जो हम कर्म करते हैं यह हमें भोगना अनिवार्य है। जैसा भी तुम कर्म करोगे वैसा ही भोगना है। इसके ऊपर बेटा! मुझे एक वार्त्ता स्मरण आती चली जा रही है, पूर्व काल में भी मैंने इस वार्त्ता को प्रकट कराया है।

एक समय बिना समय के वृष्टि हो गई। प्रजा में त्राहिमाम्-त्राहिमाम् मच

गई। ब्राह्मणजनों ने कहा कि हम किसको उपदेश दें, किसके द्वार ज्ञान की वर्षा करें, क्योंकि यहाँ तो अनावृष्टि हो गई। वैश्यों ने कहा कि हमारी सर्वस्व सम्मति समाप्त हो गई। क्षत्रियों ने कहा कि किसकी रक्षा करें और शूद्रों ने कहा कि हम किसकी सेवा करें यहाँ तो सर्वस्व समाप्त हो गया। प्रजा का समूह बना, वह प्रजापति के द्वार पर जा पहुँचे और कहा कि महाराज! हम आपके आसन को पवित्र करने नहीं आये हैं, हम तो अपनी कुछ पुकार लेकर आये हैं। उन्होंने कहा कि कारण उच्चारण करो। तो उन्होंने कहा कि महाराज! बिना समय के वृष्टि हो गई है हमारी सर्वस्व सम्पत्ति नष्ट हो गई है। प्रजापति ने कहा कि कहो, यह वृष्टि कहाँ से हुई? उन्होंने कहा कि यह वृष्टि मेघों से आई है। अब प्रजापति ने मेघ-मण्डलों को सभा में निमन्त्रित किया और कहा कि अरे मेघ मण्डलो! तुम तो बड़े स्वच्छ और पवित्र हो क्योंकि जल का रूप ही सतोगुणी होता है, यह मानव की नाना कामनाओं को भी शान्त कर देता है, यह तुमने क्या किया कि अनावृष्टि करके प्रजा का विनाश कर दिया।

मेघ मण्डलों ने कहा कि भगवन्! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। महाराजा इन्द्र ने आज्ञा दी, मैंने वृष्टि कर दी। अब प्रजापति ने इन्द्र को निमन्त्रण देकर सभा में नियुक्त किया और कहा कि अरे इन्द्र! यह बिना समय के वृष्टि की इच्छा मेघ मण्डलों से क्यों प्रकट की? उन्होंने कहा कि भगवन्! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, क्योंकि मुझ से तेा मेरी पत्नी शचि ने कहा था। अब प्रजापति ने इन्द्र की पत्नी शचि को निमन्त्रण दिया और सभा में प्रश्न किया कि हे शचि! तुम तो जगत माता हो और जगत में भ्रमण करने वाली हो, शान्तवना देने वाली हो, क्या कारण है जो तुमने पति को वृष्टि की इच्छा प्रकट की? उन्होंने कहा कि इसमें भगवन्! मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो समुद्रों ने कहा था। अब प्रजापति ने समुद्रों को निमन्त्रण दिया और सभा में नियुक्त करके कहा कि अरे समुद्रो! यह तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की? उस समय समुद्रों ने कहा कि भगवन्! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, मेरे से तो आदित्य ने कहा था। अब प्रजापति ने आदित्य को निमन्त्रण दिया और कहा कि यह तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की है? उन्होंने कहा कि भगवन्! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, मेरे से तो पृथ्वी माता ने कहा था।

अब प्रजापति ने पृथ्वी माता को निमन्त्रण दिया और सभा में कहा कि हे पृथ्वी! तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों पकट की? पृथ्वी माता ने कहा कि हे भगवन्! मैं क्या करूँ? यह प्रजा मेरे ऊपर पाप कर्म करने लगती है और जब मैं पाप से सन जाती हूँ तो उस समय मेरी इच्छा होती है कि मैं जल में स्नान करूँ। तो भगवन्! मेरी वेदना, मेरी पुकार आदित्य तक जाती है—आदित्य नाम सूर्य का है। सूर्य से भगवन्। तेज का उत्थान होता है। तेज समुद्रों में जाता है और उसी तेज से जल का उत्थान होता है और उसी से मेघ मण्डल बनते हैं।

मुनिवरो देखो! जलों का उत्थान समुद्रों से हुआ। उससे मेघ मण्डल बने। शचि नाम विद्युत का है और इन्द्र नाम वायु का है। इन तीनों का जब संघर्ष होता है तो धीमे-धीमे वृष्टि होने लगती है। जहाँ कहीं प्रजा के पाप होते हैं, वहाँ अतिवृष्टि हो जाती है और कहीं अनावृष्टि हो जाती है। प्रजा के कर्मों के द्वारा प्रायः यह होता है। पृथ्वी माता ने कहा कि भगवन्! जब मेघ मण्डलों से वृष्टि होती है तो उसमें मैं स्नान कर लेती हूँ और प्रजा अपने किए हुए पाप-पुण्य कर्मों का फल भोग लेती है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमें विचार-विनिमय यह करना है कि **मानव जो भी कर्म करता है उससे भोगना अनिवार्य है और भोगा ही जायेगा।** आज हम वास्तव में अपने कर्तव्य का पालन करते हुए अपनी मानवीयता की प्रतिभा को जानते हुए इस सँसार सागर से पार होने का प्रयास करें। हमें आत्मिक शान्ति को विचारना है क्योंकि आत्मा में शान्ति होना बहुत अनिवार्य है। हम अपने जीवन को वास्तविक उन्नतशील बनायें, पवित्र बनायें जिससे हम आत्मोन्नति प्राप्त करके परम शान्ति को प्राप्त करते रहें।

तो आज के वाक्य का अभिप्राय यह है कि आज मानव, मानव से शान्त हो करके पाप कर्म कर सकता है परन्तु परमात्मा जो सर्वव्यापक है उससे शान्त हो करके मानव कोई भी पाप कर्म नहीं कर सकता। हम सर्वस्व प्रभु को दृष्टिपात करें। कण-कण में जब हम प्रभु को दृष्टिपात करते हैं तो मानव पाप कर्म नहीं करता। **मानव पाप उस काल में करता**

है जब परमात्मा को अपने से दूर कर देता है और दूर क्यों कर देता है? केवल अज्ञानता के वश क्योंकि प्रभु को जानता नहीं। जो मानव प्रभु को जानता है वह पाप नहीं करता। पाप वही मानव किया करता है जो प्रभु से दूर हो जाता है। जो कण-कण में, मनों में, चक्षुओं में, श्रोतों में प्रत्येक इन्द्रिय में प्रभु की प्रतिभा स्वीकार करता है कि जिसने जो वस्तु बनाई है वह उसमें रमण भी कर रहा है और जब मानव को यह निश्चय हो जाता है तो वह मानव पाप नहीं करता।

आज के वाक्यों का अभिप्राय यह है कि हे मानव! आज तू अपने पापों से स्वयँ भयभीत हो। मानव को स्वयँ अपने ऊपर दया करनी होगी। मानव जब अपने ऊपर दयालु बन जायेगा तो उस समय उसे स्वयँ शान्ति होगी। दूसरों पर दयालु मत बनो, सबसे प्रथम अपने पर दयालु बनो। अपने पर दयालु कौन प्राणी बनता है और किस काल में बनता है? जब उसे अपने ऊपर पूर्ण आत्मविश्वास हो जाता है, आत्म संयमी हो जाता है। इन्द्रियों पर सँयम हो जाता है तो वह मानव अपने ऊपर स्वयँ दया करता है। जो परमात्मा को अपने शरीर में, कण-कण में स्वीकार करता है और उसकी इस प्रकार की प्रतिभा बन जाती है तो जानो कि वह मानव स्वयँ दयालु बन जाता है, शान्ति उसके हृदय में आ समाहित होती है और वह उस आनन्द को अनुभव करने लगता है। उसे परलोक को जाना है, भौतिक लोक को त्यागना है। मानव को स्वयं अपने ऊपर दया करनी होगी और यदि दया न करोगे तो इसी आवागमन में रमण करते रहोगे, जीवन में शान्ति नहीं आ पायेगी। कल मेरे प्यारे महानन्द जी भी अपने कुछ वाक्य प्रकट कर सकेंगे। आज अब यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है, अब वेदों का पाठ होगा और शेष चचाएँ कल प्रकट करेंगे।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(पुष्प न.-12 प्रवचन—5 मार्च 1969)

॥ ओ३म् ॥

शांति प्रकरण

ओ म् शं नः इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योःशं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥ १ ॥
ऋ0 ७। ३५। १ ॥

ओ३म् शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शंमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ २ ॥
ऋ0 ७। ३५। २ ॥

ओ३म् शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ ३ ॥
ऋ0 ७। ३५। ३ ॥

ओ३म् शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना
शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥ ४ ॥
ऋ0 ७। ३५। ४ ॥

ओ३म् शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं नः ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥ ५ ॥
ऋ0 ७। ३५। ५ ॥

ओ३म् शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु ॥ ६ ॥
ऋ0 ७। ३५। ६ ॥

ओ३म् शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः १ शम्वस्तु वेदिः ॥ ७ ॥
ऋ0 ७। ३५। ७ ॥

ओ३म् शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥ ८ ॥
ऋ0 ७। ३५। ८ ॥

ओ३म् शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥ ९ ॥
ऋ0 ७। ३५। ९ ॥

ओ३म् शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥ १० ॥
ऋ0 ७। ३५। १० ॥

ओ३म् शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।
शमभिषाचःशमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ॥ ११ ॥
ऋ0 ७। ३५। ११ ॥

ओ३म् शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं नः ऋभवः सुकृताः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥ १२ ॥
ऋ0 ७। ३५। १२ ॥

ओ३म् शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः १ शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः ॥ १३ ॥
ऋ0 ७। ३५। १३ ॥
ओ३म् इन्द्रो विश्वस्य राजति। शं नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १४ ॥
यजु0 ३६। ८ ॥

ओ३म् शं नो वातः पवतां ७३ शं नस्तपतु सूर्य्यः।
शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभिवर्षतु ॥ १५ ॥
यजु० ३६। १० ॥

ओ३म् अहानि शं भवन्तु नः शं ७३ रात्रीः प्रतिधीयताम्
शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या।
शं नऽइन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः ॥ १६ ॥
यजु० ३६। ११ ॥

ओ३म् शं नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शं योरभि स्रवन्तु नः ॥ १७ ॥
यजु० ३६। १२ ॥

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ७३ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म
शान्तिः सर्व ७३ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ १८ ॥
यजु० ३६। १७ ॥

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं
जीवेम शरदः शत ७३ श्रृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ १९ ॥
यजु० ३६। २४ ॥

ओ३म् यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरँगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसँकल्पमस्तु ॥ २० ॥
यजु० ३४। १ ॥

ओ३म् येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसँकल्पमस्त ॥ २१ ॥
यजु० ३४। २ ॥

यौगिक प्रवचन/सितम्बर 2012

ओउम् यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्नऽ ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसँकल्पमस्तु ॥ २२ ॥
यजु० ३४। ३ ॥

ओ३म् येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसँकल्पमस्तु ॥ २३ ॥
यजु० ३४। ४ ॥

ओ३म् यस्मिन्नृचः सामयजू ७३ षि यस्मिन प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिंश्चित्त ककक सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसँकल्पमस्तु ॥ २४ ॥
यजु० ३४। ५ ॥

ओ३म् सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन ऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसँकल्पमस्तु॥ २५ ॥
यजु० ३४। ६ ॥

ओ३म् स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते।
शं राजन्नोषधीभ्यः ॥ २६॥
साम० उ० १। ३ ॥

ओ३म् अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥ २७ ॥
अथर्व० १९। १५। ५ ॥

ओ३म् अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥ २८ ॥
अथर्व० १९। १५। ६ ॥

दान

वैदिन अनुसन्धान समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए याज्ञिक एवं श्रद्धालु महानुभाओं ने अपना सात्विक सहयोग प्रदान किया है

श्री याद राम, भमोरी	100 रुपये
श्री राकेश, धनोरी	100 रुपये
श्री कृष्णन पाल, मोदी नगर	51 रुपये
श्री संजीव कुमार, हापुड़	50 रुपये
श्रीमती पूनम त्यागी, बरखण्डा	101 रुपये
श्रीमती उमा, पत्नी श्री योगेश सैनी हरिद्वार	101 रुपये
श्री गमदुर सिंह रूपराय, फफुन्डा, हापुड़	151 रुपये
श्री जय गोपाल शर्मा, जागृति विहार, मेरठ	100 रुपये
श्री हरिशंकर तथा रामाशंकर, मोदीनगर	150 रुपये
श्री ओम दत्त त्यागी, हापुड़	100 रुपये
श्री सीताराम पुत्र श्री कालूराम, शास्त्री नगर	100 रुपये
श्री बलबीर, बरनावा	50 रुपये
श्री बलदेव, न्यू मूर्ति नगर, दिल्ली	20 रुपये
श्री लोमश सिरोही, सर्वोदय कॉलोनी, हापुड़	500 रुपये
श्रीमती सुमित्रा देवी तथा विवेक त्यागी, हापुड़	2101 रुपये
श्रीमती शांति देवी अबरोल, लाजपत नगर, न. दिल्ली	1101 रुपये
श्री कमल सिंह, मोदीनगर	101 रुपये
श्री जयपाल सिंह रंचंद	51 रुपये
श्रीमती शुकुन्तला तथा मूलचंद, आई.आई.टी. दिल्ली	1111 रुपये
श्री रणबीर बच्चन सिंह, बागपत	51 रुपये
श्री अनिल कुमार, पुत्र श्री महर सिंह, मुलसम	51 रुपये
श्री शिवराज एवं दुष्यंत, दिनकरपुर	101 रुपये
श्री विपिन आर्या, मुजफ्फरनगर	100 रुपये
श्री भगीरत चन्द डाहा	100 रुपये
श्री राम कुमार सिरसाली, बागपत	101 रुपये

श्री सुभीर सिंह सिरसाली, बागपत	100 रुपये
श्री मास्टर महेन्द्र मुलुम, बागपत	101 रुपये
श्री वीरपाल राठी, रोहतक	101 रुपये
श्री दिनेश आर्या, गौतम बुद्ध नगर	100 रुपये
श्री वेदपाल आर्या, पुत्र श्री शिवलाल गगोल	101 रुपये
श्री वीरेन्द्र, कक्केपुर, सरदना	100 रुपये
श्री राजवीर सिंह, धीरखेड़ा, मेरठ	100 रुपये
डॉ. ओम प्रकाश शर्मा एवं श्रीमती प्रकाशवती शर्मा, ननाता	251 रुपये
श्री सुरेश चन्द्र त्यागी, धीरखेड़ा, हापुड़	100 रुपये
श्रीमती अमीन सिंह त्यागी, मानसरोवर, शाहदरा	100 रुपये
कनकारा निर्वान, आई.आई.टी. दिल्ली	251 रुपये
श्री संतीव त्यागी, सोनीपत	105 रुपये
श्री विजय त्यागी, गुड़गाँव	100 रुपये
श्री रामभूल, मिरपुर	50 रुपये
श्री अनिल कुमार त्यागी, रासना, मेरठ	100 रुपये
श्री महेन्द्र एवं महावीर डोंगर	50 रुपये
श्री रामे, कक्केपुर, सरदना	100 रुपये
श्री रोहताश जी, ग्राम- चंदायन	101 रुपये
श्रीमती किरण सिंह, रणचोर	51 रुपये
श्री सुबोध त्यागी, मुजफ्फरनगर	150 रुपये
श्री भोले त्यागी पुत्र श्री भगवत त्यागी, ग्राम-खुरमपुर,	300 रुपय
श्री मदन पाल आर्या, मेरठ	50 रुपये
श्री किशन त्यागी, ग्राम- रासना	51 रुपये
श्री राजबीर सिंह	101 रुपये
श्री रन सिंह	50 रुपये
श्री एफ.सी. त्यागी, बड़ौत	100 रुपये
श्री अक्षय जी, शामली	100 रुपये
श्री मास्टर रामनिवास माछरा	200 रुपये

सभी उपरोक्त दान दाताओं का समिति हृदय से आभार प्रकट करती है और उनको परिवार सहित जीवन में सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।